ओ३म्

अन्त्येष्टि संस्कार

ओ३म्

अन्त्येष्टि-संस्कार

[स्वामी दयानन्द सरस्वती-कृत 'संस्कारविधि' पर आधारित]

(परिभाषा, काल, मुख्य क्रियाएँ, आवश्यक वस्तुएँ, विधिक्रम, शंका-समाधान इत्यादि)

लेखक

सत्यानन्द वेदवागीश

विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द

निवेदन

कुछ वर्ष पूर्व मेरी 'नामनिधि' पुस्तिका प्रकाशित हुई थी। उसका अवलोकन करने के पश्चात् प्रसिद्ध आर्यसमाज-सेविका अलवर-निवासिनी आदरणीया बहिन मोहनदेवी जी ने **'अन्त्येष्टि-संस्कार'** सम्बन्धी एक पृथक् पुस्तिका लिखने के लिए मुझे प्रेरित किया। यद्यपि यह संस्कार 'संस्कारविधि' में उल्लिखित था ही, तथापि श्मशान-स्थली में पूरी पुस्तक ले जाने और फिर उसी पुस्तक को अन्य संस्कारों में प्रयोग में लाने की कठिनाई थी। अतः मुझे भी 'अन्त्येष्टि-संस्कार' का पृथक् छपना उचित लगा।

बहिन जी के आशय को समादर देते हुए मैंने इसे स्वीकार कर लिया। परिणामस्वरूप यह पुस्तिका जनता-जनार्दन के हाथों में है। इसमें सबसे प्रथम 'अन्त्येष्टि-संस्कार' की परिभाषा, काल, मुख्य क्रियाओं और अपेक्षित वस्तुओं का उल्लेख करके क्रमानुसार संस्कार की विधि लिखी है और आहुतियों के सम्पूर्ण मन्त्र भी दिये हैं। अन्त में दाहकर्म के पश्चात् की आवश्यक क्रियाएँ भी लिखी हैं। इन सबका मुख्य आधार महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती द्वारा रचित 'संस्कार-विधि' ग्रन्थ है। अन्त्येष्टि-संस्कार तथा इससे सम्बद्ध अन्य अनेक विषयों में अनेक विवादास्पद बातें होती

रहती हैं। उनका स्पष्टीकरण भी आवश्यक था। अतः सर्वान्त में 'शंका-समाधान' नाम से प्रश्नोत्तर-रूप में कुछ बातों को स्वबुद्धि के अनुसार स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। इसका प्रथम संस्करण संवत् २०४५ में छपा था। उसका व्ययभार बहिन मोहनदेवी जी ने उठाया था। वह तुरत समाप्त हो गया। अब यह द्वितीय संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है।

मकर संक्रान्ति २०५४ वि० **—सत्यानन्द वेदवागीश**

२७२, आर्यनगर, अलवर (राज०)

ओ३म्

अन्त्येष्टि-संस्कार

परिभाषा

आत्मा के द्वारा शरीर का त्याग कर देने के पश्चात् उस निर्जीव शरीर के विधिपूर्वक किये गये दाहकर्म को अन्त्येष्टि-संस्कार कहते हैं। यह, उस शरीर से सम्बद्ध अन्त्य (अन्तिम) इष्टि (यज्ञ) है, अतः इस कर्म का नाम अन्त्येष्टि है। नर (मनुष्य) अथवा पुरुष (मनुष्य) से सम्बद्ध (बृहत्तम) याग (यज्ञ) होने के कारण इसे नरयाग अथवा पुरुषयाग भी कहते हैं। नर (मानवदेह) अथवा पुरुष (मानवदेह) के पार्थिव आदि तत्त्वों को यथासमय दाहकर्म के द्वारा पृथिवी, जल आदि भूतों (पदार्थों) में मेध करने (पवित्रतापूर्वक मिलाने) के कारण इसे नरमेध या पुरुषमेध भी कहा जाता है।

काल

आत्मा के शरीर से निकल जाने (मृत्यु हो जाने) के एक प्रहर (३ घंटे) बाद यथाशीघ्र उस शरीर का दाह कर देना चाहिये, क्योंकि निर्जीव शरीर शीघ्र विकृत होने लगता है। वैधानिक अथवा पारिवारिक आदि कारणों से यदि

दाहकर्म में विलम्ब की सम्भावना हो, तो उस शरीर को सुरक्षित रखने की उचित व्यवस्था करनी चाहिये।

मुख्य क्रियाएँ

मृतकशरीर को सुरक्षित करना, कौटुम्बिक जनों तथा इष्टमित्रों को मृत्यु की सूचना देना, अन्त्येष्टिसंस्कार के लिये आवश्यक वस्तुओं को संगृहीत करना, अपेक्षित वस्तुओं को श्मशान-स्थली में पहुँचाना, श्मशानभूमि में वेदि बनवाना अथवा पहले से बनी हुई वेदी को झाड़-बुहारकर गोबर से लीपना।

घर पर

मृतकशरीर को स्नान कराना, उस पर चन्दन आदि का लेप करना, शवमञ्चिका (अर्थी) तैयार करना, उस पर मृतकशरीर को स्थापित करके व्यवस्थित करना, ऊपर से उसे फूलमालाओं वे वेष्टित करना; शवयात्रा (मृतकशरीर को श्मशान-स्थल में पहुँचाना)। घर में महिलाओं तथा बच्चों आदि द्वारा स्नान—वस्त्रप्रक्षालन करना, घर को पानी आदि से स्वच्छ करना, होम की तैयारी करना।

श्मशान-स्थली में

वेदी में काष्ठ-चयन करना, घृतादि तैयार करना, मृतकशरीर को वेदीस्थ काष्ठों पर स्थापित करना, ऊपर से ढाक चन्दनादि काष्ठों का चयन करना, घृतदीपक का प्रज्वालन करना, कपूर के द्वारा वेदी में अग्नि प्रविष्ट कराना, अग्निप्रदीपन के लिए मन्त्रों के साथ मृतकवेदी में ५ घृताहुति

देना, थोड़ा ठहरकर वेदी में अन्त्येष्टिसंस्कार की ११६ आहुतियाँ मन्त्रोच्चारण के साथ लगाना।

शरीर के भस्म हो जाने के पश्चात् सब दाहकर्मियों का स्नान-वस्त्रप्रक्षालन, मृतक के घर में होम, न्यूनातिन्यून तीन दिन तक विशेष होम; तीसरे दिन अस्थिचयन, अस्थि-भस्मि का निर्जन स्थान की भूमि में मृत्तिकासात् विसर्जन, अस्थिचयनकर्त्ताओं का स्नानादि, विशेष होम, शोकसभा (उठावना) और सत्पात्र में यथाशक्ति दान करना।

आवश्यक वस्तुएँ

(१) शवमञ्चिका (=अर्थी) का सामान—२ मोटे बांस (८ फुट के), ८ बाँस के टुकड़े (३ फुट के) फूस, सूतली ५०० ग्राम, शववस्त्र (कफन) ६ मीटर, फूलमालाएँ १६, चन्दन (घिसा हुआ)।

(२) दाहकर्म का सामान—काष्ठ (लकड़ियाँ) साढ़े ३ क्विटल, पलाश (ढाक) के काष्ठ १० किलो, चन्दनकाष्ठ ५ किलो, देशी घी २० किलो, [हवन-सामग्री १० किलो], तगर १ किलो, चन्दनचूरा १ किलो, केसर २० ग्राम, कस्तूरी २० रत्ती, कपूर ३०० ग्राम, [खोपरे (गोले) ४ किलो] गाय का गोबर १ तसला; घृतपात्र ४, चम्मच (बड़े) ४, बाँस (१२ फुट के) ४, तार पतला १०० ग्राम, बाल्टी १, दीपक १, माचिस १, रूई; चूल्हे के लिए ईंटें ६। वस्तुओं का यह परिमाण शास्त्रोक्त निर्देश का मध्यम है। यदि मृतक के परिवार वाले सुसम्पन्न हों तो घृत आदि पदार्थ इससे भी अधिक मात्रा में (शरीर के भार के बराबर घी आदि) ले लें।

गरीब हों तो काष्ठ (लकड़ियाँ) और घृत (२० कि०) तो अवश्य ले लें। यदि अतिशय गरीब हों तो भी ५ किलो घृत की तो व्यवस्था अवश्य की जानी चाहिये। सर्वथा अभाव में केवल काष्ठ से भी दाह करें, किन्तु तब आहुति देने की विधि त्याज्य है।

(३) **वेदी**—ऊपर से साढ़े चार हाथ लम्बी, साढ़े तीन हाथ चौड़ी; नीचे डेढ़ बालिश्त लम्बी, १ बालिशत चौड़ी तथा ढाई हाथ गहरी वेदी का परिमाण है। उत्तर-दक्षिण में लम्बाई और पूर्व-पश्चिम में चौड़ाई रखें। वेदी को पानी का छिड़काव करके गौ के गोबर से लीपना आवश्यक है।

विधिक्रम

किसी की मृत्यु हो जाने पर उस मृतक के घर के सदस्यों को, मरणोपरान्त किये जाने वाले अन्त्येष्टि-संस्कार-सम्बन्धी कार्यों को यथासम्भव ४ विभागों में बाँट लेना चाहिये—१. मृत्यु की सूचना देना; २. अपेक्षित (आवश्यक) वस्तुओं को संगृहीत करना और उन्हें श्मशान-स्थली तक पहुँचाना; ३. मृतक-शरीर को स्नानादि कराना और शवयात्रार्थ उसे व्यवस्थित करना; तथा ४. श्मशान-स्थली में वेदी की व्यवस्था करना। यदि ये चारों कार्य पृथक्-पृथक् ४ व्यक्तियों को सौंपे जा सकें तो सुविधाजनक रहेगा।

जब शवमञ्चिका (अर्थी) का सामान घर पर पहुँच जाय, तो दो व्यक्ति उसे तैयार करें और घरवाले मृतक-शरीर को स्नान कराकर और उस पर चन्दनादि सुगन्धित पदार्थों का लेप करके उसे नवीन शववस्त्र (कफन) धारण करावें और

लपेट दें। तब शवमञ्चिका अन्दर ले-जाकर, उस पर मृतक शरीर को स्थापित कर सूतली से सुव्यवस्थित कर लें और ऊपर से पुष्पमालाएँ अटका दें।

जब कुटुम्ब-परिवार के लोग और इष्ट-मित्रजन पर्याप्त संख्या में एकत्रित हो जायँ, तो शवयात्रा का आरम्भ करें। शवयात्रा-प्रस्थान के बाद घर को धो-पोंछकर शुद्ध करें। घर में महिलाएँ तथा रोगी, वृद्ध आदि भी स्नान-वस्त्रप्रक्षालन से शुद्ध हो जायँ। छोटें बच्चों को भी स्नानादि करावें। तत्पश्चात् होम की तैयारी करें।

उधर, शवयात्रा के श्मशान-स्थली पहुँच जाने पर शवमञ्चिका को किसी शुद्ध स्थान पर रख दें। कुछ व्यक्ति गाय के गोबर से लिपी हुई वेदी में काष्ठ-चयन करें। काष्ठचयन करते समय बीच-बीच में फूस के साथ-साथ थोड़ा कपूर भी धरते जायँ। कुछ व्यक्ति अलग एक चूल्हा जलाकर उस पर घृत गरम कर, छानकर, उसमें चन्दनचूरा, अगर-तगर का चूर्ण, केसर-कस्तूरी और कपूर आदि सुगन्धित द्रव्य मिलावें और उस घृत को पात्रों में ले लें। यदि 'हवनसामग्री' लाई गई हो और थोड़ी मात्रा में हो, तो उसे भी घृत में मिला लें। यदि हवनसामग्री विशेष मात्रा में हो तो उसमें इतना घी अवश्य मिला लें, कि वह सूखी न रहे और मुट्ठी में बाँधकर, पर्याप्त दूरी से उसकी आहुति दी जा सके।

जब वेदी में आधी ऊँचाई तक काष्ठ चुन दिये जायँ, तो उन पर मध्य में मृतक-शरीर को स्थापित करें। उसका सिर उत्तर दिशा में और पग दक्षिण दिशा में रखें। यदि वेदी समदिशा में न बनी हो और दिशाकोणों में लम्बित हो, तो

मृतक का शिर ईशान (उत्तरपूर्व) कोण में और पग नैर्ऋत्य (दक्षिण-पश्चिम) कोण में रखें। अथवा, वेदी के अनुसार शिर वायव्य (उत्तर-पश्चिम) कोण में और पग आग्नेय (दक्षिणपूर्व) कोण में रखें। शिर वाला भाग थोड़ा ऊँचा तथा पग की ओर का भाग थोड़ा नीचा रहे। तत्पश्चात् मृतक-शरीर के सिर तथा छाती पर भारी काष्ठ स्थापित करें और शेष शरीर को चन्दन तथा पलाश आदि के पर्याप्त काष्ठों से व्यवस्थापूर्वक ढक दें। वेदी से १ बालिश्त ऊपर तक काष्ठ चिनें। बाहर से भी खाली स्थानों में फूस तथा कपूर रख दें।

यदि श्मशान-स्थली में वेदी बनी हुई न हो और उस समय बनाना भी सम्भव न हो तो सामान्य दाह-स्थान को ही पूर्वतः झाड़-बुहारकर गाय के गोबर से लिपवा लें और उसी पर पूर्ववत् काष्ठ आदि का चयन करें।

तदनन्तर घृत का दीपक प्रज्वलित कर, बाँस में तार से बँधे चम्मच में कपूर धर लें। उस कपूर को दीपक की अग्नि से प्रज्वलित कर, उससे वेदीस्थ काष्ठों के मध्य में शिर से आरम्भ कर पगों तक चारों दिशाओं से अग्नि प्रविष्ट करावें। तब चारों दिशाओं में उचित दूरी पर खड़े होकर चार व्यक्ति (अथवा २, अथवा १ व्यक्ति) घृतपात्र में से सुगन्धित द्रव्य मिश्रित घी की, निम्नलिखित ५ मन्त्रों से ५ आहुतियाँ वेदी में देवें—

ओ३म् अग्नये स्वाहा॥ १॥ ओं सोमाय स्वाहा॥ २॥ ओं लोकाय स्वाहा॥ ३॥ ओं अनुमतये स्वाहा॥ ४॥ ओं स्वर्गाय लोकाय स्वाहा॥ ५॥

इन आहुतियों को देकर थोड़ा ठहर जायँ। जब अग्नि पूरी वेदी में अच्छी प्रकार प्रदीप्त हो जाय, तो निम्नलिखित

११६ मन्त्रों से सुगन्धित घृतादि की ११६ आहुतियाँ देवें—

ओं सूर्यं चक्षुर् गच्छतु वातमात्मा,
द्यां च गच्छ पृथिवीं च धर्मणा।
अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितम्,
ओषधीषु प्रति तिष्ठा शरीरैः स्वाहा॥ १॥

ओम् अजो भागस् तपसा तं तपस्व,
तं ते शोचिस् तपतु तं ते अर्चिः।
यास्ते शिवास्तन्वो जातवेदस्,
ताभिर् वहैनं सुकृतामु लोकं स्वाहा॥ २॥

ओम् अव सृज पुनरग्ने पितृभ्यो,
यस्त आहुतश् चरति स्वधाभिः।
आयुर्वसान उपवेतु शेषः,
सं गच्छतां तन्वा जातवेदः स्वाहा॥ ३॥

ओम् अग्नेर्वर्म परि गोभिर् व्ययस्व,
सं प्रोर्णुष्व पीवसा मेदसा च।
नेत्त्वा धृष्णुर् हरसा जर्हृषाणो,
दधृग् विधक्ष्यन् पर्यङ्खयाते स्वाहा॥ ४॥

ओं यं त्वमग्ने समदहस्, तमु निर्वापया पुनः।
कियाम्ब्वत्र रोहतु, पाकदूर्वा व्यल्कशा स्वाहा॥ ५॥

[ऋ० १०.१६.३-५, ७, १३]

ओम् परेयिवांसं प्रवतो महीरनु,
बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम्।
वैवस्वतं संगमनं जनानां,
यमं राजानं हविषा दुवस्य स्वाहा॥ ६॥

ओं यमो नो गातुं प्रथमो विवेद,
नैषा गव्यूतिरपभर्त्तवा उ।
यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुरेना
जज्ञानाः पथ्या अनु स्वाः स्वाहा॥ ७॥

ओम् मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिर्,
बृहस्पतिर् ऋक्वभिर् वावृधानः।
यांश्च देवा वावृधुर् ये च देवान्त्
स्वाहान्ये स्वधयान्ये मदन्ति स्वाहा॥ ८॥

ओम् इमं यम प्रस्तरमा हि सीदा-
ङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः।
आ त्वा मन्त्राः कविशस्ता वह-
न्त्वेना राजन् हविषा मादयस्व स्वाहा॥ ९॥

ओम् अङ्गिरोभिरा गहि यज्ञियेभिर्,
यम वैरूपैरिह मादयस्व।
विवस्वन्तं हुवे यः पिता ते-
ऽस्मिन् यज्ञे बर्हिष्या निषद्य स्वाहा॥ १०॥

ओम् प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभिर्,
यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुः।
उभा राजाना स्वधया मदन्ता,
यमं पश्यासि वरुणं च देवं स्वाहा॥ ११॥

ओं सं गच्छस्व पितृभिः
संयमेनेष्टापूर्त्तेन परमे व्योमन्।
हित्वायावद्यं पुनरस्तमेहि,
सं गच्छस्व तन्वा सुवर्चाः स्वाहा॥ १२॥

ओम् अपेत वीत वि च
सर्पतातोऽस्मा एतं पितरो लोकमक्रन्।
अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं,
यमो ददात्यवसानमस्मै स्वाहा॥ १३॥

ओं यमाय सोमं सुनुत, यमाय जुहुता हविः।
यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरंकृतः स्वाहा॥ १४॥

ओं यमाय घृतवद्धविर्, जुहोत प्र च तिष्ठत।
स नो देवेष्वायमद्, दीर्घमायुः प्र जीवसे स्वाहा॥ १५॥

ओं यमाय मधुमत्तमं,
राज्ञे हव्यं जुहोतन।
इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः,
पूर्वेभ्यः पथिकृद्भ्यः स्वाहा॥ १६॥

[ऋ० १०. १४. १-५,७-९, १३-१५]

ओं कृष्णः श्वेतोऽरुषो यामो अस्य,
ब्रध्न ऋज्र उत शोणो यशस्वान्।
हिरण्यरूपं जनिता जजान स्वाहा॥ १७॥

[ऋ० १०. २०. ९]

ओम् प्राणेभ्यः साधिपतिकेभ्यः स्वाहा॥ १८॥
ओम् पृथिव्यै स्वाहा॥ १९॥
ओम् अग्नये स्वाहा॥ २०॥
ओम् अन्तरिक्षाय स्वाहा॥ २१॥
ओं वायवे स्वाहा॥ २२॥
ओं दिवे स्वाहा॥ २३॥
ओं सूर्याय स्वाहा॥ २४॥

ओं दिग्भ्यः स्वाहा ॥ २५ ॥
ओं चन्द्राय स्वाहा ॥ २६ ॥
ओं नक्षत्रेभ्यः स्वाहा ॥ २७ ॥
ओम् अद्भ्यः स्वाहा ॥ २८ ॥
ओं वरुणाय स्वाहा ॥ २९ ॥
ओं नाभ्यै स्वाहा ॥ ३० ॥
ओम् पूताय स्वाहा ॥ ३१ ॥
ओं वाचे स्वाहा ॥ ३२ ॥
ओम् प्राणाय स्वाहा ॥ ३३ ॥
ओम् प्राणाय स्वाहा ॥ ३४ ॥
ओं चक्षुषे स्वाहा ॥ ३५ ॥
ओं चक्षुषे स्वाहा ॥ ३६ ॥
ओं श्रोत्राय स्वाहा ॥ ३७ ॥
ओं श्रोत्राय स्वाहा ॥ ३८ ॥
ओं लोमभ्यः स्वाहा ॥ ३९ ॥
ओं लोमभ्यः स्वाहा ॥ ४० ॥
ओं त्वचे स्वाहा ॥ ४१ ॥
ओं त्वचे स्वाहा ॥ ४२ ॥
ओं लोहिताय स्वाहा ॥ ४३ ॥
ओं लोहिताय स्वाहा ॥ ४४ ॥
ओम् मेदोभ्यः स्वाहा ॥ ४५ ॥
ओम् मेदोभ्यः स्वाहा ॥ ४६ ॥
ओम् माꣳसेभ्यः स्वाहा ॥ ४७ ॥
ओम् माꣳसेभ्यः स्वाहा ॥ ४८ ॥
ओं स्नावभ्यः स्वाहा ॥ ४९ ॥

ओं स्नावभ्यः स्वाहा ॥ ५० ॥
ओम् अस्थभ्यः स्वाहा ॥ ५१ ॥
ओम् अस्थभ्यः स्वाहा ॥ ५२ ॥
ओम् मज्जभ्यः स्वाहा ॥ ५३ ॥
ओम् मज्जभ्यः स्वाहा ॥ ५४ ॥
ओं रेतसे स्वाहा ॥ ५५ ॥
ओम् पायवे स्वाहा ॥ ५६ ॥
ओम् आयासाय स्वाहा ॥ ५७ ॥
ओम् प्रायासाय स्वाहा ॥ ५८ ॥
ओं संयासाय स्वाहा ॥ ५९ ॥
ओं वियासाय स्वाहा ॥ ६० ॥
ओम् उद्यासाय स्वाहा ॥ ६१ ॥
ओं शुचे स्वाहा ॥ ६२ ॥
ओं शोचते स्वाहा ॥ ६३ ॥
ओं शोचमानाय स्वाहा ॥ ६४ ॥
ओं शोकाय स्वाहा ॥ ६५ ॥
ओं तपसे स्वाहा ॥ ६६ ॥
ओं तप्यते स्वाहा ॥ ६७ ॥
ओं तप्यमानाय स्वाहा ॥ ६८ ॥
ओं तप्ताय स्वाहा ॥ ६९ ॥
ओं धर्माय स्वाहा ॥ ७० ॥
ओं निष्कृत्यै स्वाहा ॥ ७१ ॥
ओम् प्रायश्चित्त्यै स्वाहा ॥ ७२ ॥
ओम् भेषजाय स्वाहा ॥ ७३ ॥
ओं यमाय स्वाहा ॥ ७४ ॥

ओम् अन्तकाय स्वाहा ॥ ७५ ॥
ओम् मृत्यवे स्वाहा ॥ ७६ ॥
ओम् ब्रह्मणे स्वाहा ॥ ७७ ॥
ओम् ब्रह्महत्यायै स्वाहा ॥ ७८ ॥
ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ॥ ७९ ॥
ओं द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा ॥ ८० ॥

[यजु० ३९. १-३, १०-१४]

ओं सूर्यं चक्षुषा गच्छ वातमात्मना,
दिवं च गच्छ पृथिवीं च धर्मभिः।
अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हित-
मोषधीषु प्रति तिष्ठा शरीरैः स्वाहा ॥ ८१ ॥

ओं सोम एकेभ्यः पवते,
घृतमेक उपासते।
येभ्यो मधु प्रधावति,
तांश्चिदेवापि गच्छतात् स्वाहा ॥ ८२ ॥

ओं ये चित्पूर्व ऋतसाता,
ऋतजाता ऋतावृधः।
ऋषींस्तपस्वतो यम,
तपोजाँ अपि गच्छतात् स्वाहा ॥ ८३ ॥

ओं तपसा ये अनाधृष्यास्,
तपसा ये स्वर्ययुः।
तपो ये चक्रिरे महस्,
तांश्चिदेवापि गच्छतात् स्वाहा ॥ ८४ ॥

ओं ये युध्यन्ते प्रधनेषु,
शूरासो ये तनूत्यजः।
ये वा सहस्रदक्षिणास्
तांश्चिदेवापि गच्छतात् स्वाहा॥ ८५॥

ओं स्योनास्मै भव पृथिव्यनृक्षरा निवेशनी।
यच्छास्मै शर्म सप्रथाः स्वाहा॥ ८६॥

ओम् अपेमं जीवा अरुधन् गृहेभ्यस्
तं निर्वहत परि ग्रामादितः।
मृत्युर्यस्यासीद् दूतः प्रचेता
असून् पितृभ्यो गमयां चकार स्वाहा॥ ८७॥

ओं यमः परोऽवरो विवस्वान् ततः
परं नाति पश्यामि किं चन।
यमे अध्वरो अधि मे निविष्टो,
भुवो विवस्वानन्वा ततान स्वाहा॥ ८८॥

ओम् अपागूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः,
कृत्वा सवर्णामदधुर् विवस्वते।
उताश्विनावभरद् यत्तदासीद-
जहादु द्वा मिथुना सरण्यूः स्वाहा॥ ८९॥

ओम् इमौ युनज्मि ते वह्नी,
असुनीताय वोढवे।
ताभ्यां यमस्य सादनं,
समितीश्चाव गच्छतात् स्वाहा॥ ९०॥

[अथर्व० १८.२.७, १४-१७,१९,२७,३२,३३,५६]

ओम् अग्नये रयिमते स्वाहा॥ ९१॥
ओम् पुरुषस्य सयावर्यपेदघानि मृज्महे।
यथा नो अत्र नापरः, पुरा जरस आयति स्वाहा॥ ९२॥
[तै० आ० ६१]

ओं य एतस्य पथो गोप्तारस् तेभ्यः स्वाहा॥ ९३॥
ओं य एतस्य पथो रक्षितारस् तेभ्यः स्वाहा॥ ९४॥
ओं य एतस्य पथोऽभिरक्षितारस् तेभ्यः स्वाहा॥ ९५॥
ओं ख्यात्रे स्वाहा॥ ९६॥
ओम् अपाख्यात्रे स्वाहा॥ ९७॥
ओम् अभिलालपते स्वाहा॥ ९८॥
ओम् अपलालपते स्वाहा॥ ९९॥
ओम् अग्नये कर्मकृते स्वाहा॥ १००॥
ओं यमत्र नाधीमस् तस्मै स्वाहा॥ १०१॥
ओम् अग्नये वैश्वानराय सुवर्गाय लोकाय स्वाहा॥ १०२॥
[तै० आ ६.२]

ओम् आयातु देवः सुमनाभिरूतिभिर्,
यमो ह वेह प्रयताभिरक्ता।
आसीदतां सुप्रयतेह बर्हि-
यूर्जाय जात्यै मम शत्रुहत्यै स्वाहा॥ १०३॥

ओं योऽस्य कौष्ठ्य जगतः,
पार्थिवस्येक इद्वशी।
यमं भङ्ग्यश्रवो गाय,
यो राजाऽनपरोध्यः स्वाहा॥ १०४॥

ओं यमं गाय भङ्ग्यश्रवो
यो राजा ऽपरोध्यः।
येना ऽऽपो नद्यो धन्वानि,
येन द्यौः पृथिवी दृढा स्वाहा॥ १०५॥

ओं हिरण्यकक्षान्त् सुधुरान्,
हिरण्याक्षानयःशफान्।
अश्वाननश्शतो दानं,
यमो राजाभितिष्ठति॥ १०६॥

ओं यमो दाधार पृथिवीं,
यमो विश्वमिदं जगत्।
यमाय सर्वमित्तस्थे,
यत् प्राणद् वायुरक्षितं स्वाहा॥ १०७॥

ओं यथा पञ्च यथा षड्,
यथा पञ्चदशर्षयः।
यमं यो विद्यात् स ब्रूयाद्,
यथैक ऋषिर्विजानते स्वाहा॥ १०८॥

ओं त्रिकद्रुकेभिः पतति,
षडुर्वीरेकमिद् बृहत्।
गायत्री त्रिष्टुप् छन्दांसि,
सर्वा ता यम आहिता स्वाहा॥ १०९॥

ओम् अहरहर्नयमानो, गामश्वं पुरुषं जगत्।
वैवस्वतो न तृप्यति, पञ्चभिर्मानवैर्यमः स्वाहा॥ ११०॥

ओं वैवस्वते विविच्यन्ते, यमे राजनि ते जनाः।
ये चेह सत्येनेच्छन्ते, य उ चानृतवादिनः स्वाहा॥ १११ ॥

ओं ते राजन्निह विविच्यन्ते
ऽथा यन्ति त्वामुप।
देवांश्च ये नमस्यन्ति,
ब्राह्मणांश्चापचित्यति स्वाहा॥ ११२ ॥

ओं यस्मिन् वृक्षे सुपलाशे, देवैः संपिबते यमः।
अत्रा नो विश्पतिः पिता पुराणा अनुवेनति स्वाहा॥ ११३ ॥

[तै० आ० ६. ५]

ओम् उत्ते तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं,
लोकं निदधन्मो अहं रिषम्।
एतां स्थूणां पितरो धारयन्तु,
तेऽत्रा यमः सादनात् ते मिनोतु स्वाहा॥ ११४ ॥

[तै० आ० ६. ७]

ओं यथा ऽहान्यनुपूर्वं भवन्ति,
यथर्तव ऋतुभिर्यन्ति क्लृप्ताः।
यथा नः पूर्वमपरो जहात्येवा
धातरायूंषि कल्पयैषां स्वाहा॥ ११५ ॥

ओं न हि ते अग्ने तनुवै, क्रूरं चकार मर्त्यः।
कपिर्बभस्ति तेजनं, पुनर्जरायुर्गौरिव॥
अप नः शोशुचदघमग्ने शुशुग्ध्या रयिम्।
अप नः शोशुचदघं मृत्यवे स्वाहा॥ ११६ ॥

यदि घृतादि सामग्री बच जाय तो उपरिलिखित १२१ मन्त्रों से ही पुनः आहुतियाँ देवें।

जब शरीर भस्म हो जावे, तो सब दाहकर्त्ता लोग निर्धारित स्थान पर अथवा घर पर आकर स्नान-वस्त्रप्रक्षालन करें। तदनन्तर मृतक के घर में विशेष होम करना आवश्यक है। इसमें स्वस्तिवाचन तथा शान्तिकरण के मन्त्रों से, इलायची-जावित्री-जायफल आदि सुगन्धित द्रव्यमिश्रित घृत की आहुतियाँ अवश्य देवें। यह विशेष होम तीन दिन तक अवश्य करें। अधिक दिन तक करें तो और अच्छा है।

तीसरे दिन श्मशान-स्थली में जाकर अस्थि-चयन करें। अस्थि-चयन से पूर्व वेदीस्थ अग्नि पर अथवा भस्म-समूह पर पानी का छिटकाव करें, जिससे, यदि अग्नि अवशिष्ट हो तो वह शान्त हो जाय और अस्थिखण्ड भी चूर्णित हो जायँ।

अस्थिखण्डों और भस्मी को किसी पात्र अथवा थैले में भरकर किसी निर्जन स्थान में ले जावें। वहाँ पड़त भूमि को एक हाथ गहरी खोदकर उन अस्थिखण्डों और भस्मी को पृथ्वी के अंशों में (मृत्तिका में) मिला दें। ऊपर से मिट्टी से अच्छी प्रकार ढक दें।

वहाँ से लौटकर स्नानादि से शुद्ध होकर विशेष होम करें। तदनन्तर एक अल्पकालिक शोकसभा करें। उसमें मृत आत्मीय के आत्मा की शान्ति-सद्गति के लिए शुभकामना-प्रार्थना, उसके सद्गुणों-शुभकर्मों का वर्णन तथा उसके द्वारा आरम्भ किये हुए शुभकर्मों एवं प्रवृत्तियों के अनुकरण, स्थायित्व और प्रसार हेतु व्रतग्रहण आदि का समावेश हो।

उसी समय मृतक के परिवार वाले अपनी शक्ति के अनुसार वेदविद्या, वेदोक्त धर्मप्रचार, अनाथपालन, वेदोक्त धर्मोपदेश की प्रवृत्ति, पुस्तक-प्रकाशन, गो-पालन आदि के

लिये तथा दलित एवं पीड़ित मनुष्यों की सहायतार्थ और सर्वहितकारी कूप, तड़ाग, चिकित्सालय, विद्यालय, गुरुकुल, समाजमन्दिर आदि के निर्माण-सुधार हेतु दान देवें।

तत्पश्चात् शान्तिपाठपूर्वक सभाविसर्जन करें और शोक का अवसान करें।

शंका-समाधान

१. प्रश्न--क्या अन्त्येष्टि (दाहकर्म) भी एक 'संस्कार' है ? यदि हाँ तो इससे किसका संस्कार किया जाता है ?

उत्तर—(i) हाँ, अन्त्येष्टि (दाहकर्म) अवश्य ही 'संस्कार' है। 'संस्कारविधि' में इसे चार स्थानों पर 'संस्कार' कहा है—१. 'गर्भाधानादि अन्त्येष्टिपर्यन्त सोलह संस्कार क्रमशः लिखे हैं' (भूमिका)। २. 'गर्भाद्या मृत्युपर्यन्ताः संस्काराः षोडशैव हि' (आरम्भिक द्वितीय श्लोक)। ३. 'अन्त्येष्टि' कर्म उसको कहते हैं कि जो शरीर के अन्त का संस्कार है' (अन्त्येष्टिकर्मविधि)। ४. 'इति मृतकसंस्कार-विधिः समाप्तः। मनुस्मृति में—'निषेकादिश्मशानान्तो मन्त्रैर्यस्योदितो विधिः' (२. १६) इस श्लोक में गर्भाधान से लेकर श्मशानविधिः (अन्त्येष्टि) पर्यन्त कर्मों को समन्त्रक संस्कार माना है। इस श्लोक के विधि शब्द का अभिप्राय संस्कार से है, इसका स्पष्टीकरण २६वें श्लोक से हो जाता है—'वैदिकैः कर्मभिः पुण्यैर्निषेकादिर्द्विजन्मनाम्। कार्यः शरीरसंस्कारः पावनः प्रेत्य चेह च'॥ यहाँ 'निषेकादिः' शब्द के साथ पूर्वोक्त 'श्मशानान्त' शब्द अवश्य अध्याहृत होगा और उन दोनों की (उन दोनों द्वारा ग्राह्य अन्य जातकर्म-उपनयन-विवाह आदि की भी) 'शरीरसंस्कारः' सञ्ज्ञा है। (ii) अन्त्येष्टि-

संस्कार के द्वारा शरीर का ही संस्कार किया जाता है। गर्भाधान से लेकर संन्यास-पर्यन्त १५ संस्कारों से आत्मा और शरीर दोनों का संस्कार होता है (—'शरीरात्मविशुद्धये', तथा 'जिस करके शरीर और आत्मा सुसंस्कृत होने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त हो सकते हैं' (सं० वि०)। किन्तु अन्त्येष्टि संस्कार से केवल शरीर का ही संस्कार होता है। 'सतो गुणान्तराधानं संस्कारः'—पदार्थ में, अवस्थित गुणों से अतिरिक्त अन्य गुणों का आधान कर देना संस्कार कहलाता है। सङ्गत अथवा सम्यक् क्रिया का नाम भी संस्कार है। निर्जीव शरीर को यदि वैसे ही छोड़ दिया जाय, तो वह निरन्तर विकारयुक्त होकर वायु, भूमि, जल आदि को विकृत करता हुआ रोगोत्पत्ति द्वारा संसार के दुःख का कारण बनता है। अन्त्येष्टि (दाह) द्वारा विकारावस्था से पूर्व ही उसका पार्थिव आदि तत्त्वों में पवित्रतापूर्वक मिश्रण करने रूप संस्कार कर देने से, वह विकारजनकत्व-रूप दोष समाप्त हो जाता है। एवं यह सम्यक्-सङ्गत क्रिया भी हुई।

२. प्रश्न—क्या मृतक शरीर का भूमि में गाड़ना, जल में प्रवाहित कर देना, जङ्गल में या कूप आदि में छोड़ देना आदि मृतक-संस्कार नहीं कहला सकता?

उत्तर—नहीं। क्योंकि ऐसा करने से शरीर निरन्तर विकृत होकर जल, भूमि, वायु को दूषित करके दारुण रोगोत्पत्ति का कारण बनता है। अतः इन गाड़ने आदि की क्रियाओं को संस्कार कभी नहीं कह सकते, प्रत्युत इन्हें 'विकार' कहना अधिक उचित है। शवों को गाड़ने से अनेक हानियाँ होती हैं, यथा—

(क) गाड़ने से भूमि का व्यर्थ में ही दुरुपयोग होता है। हजारों-लाखों एकड़ भूमि व्यर्थ में रुकी रहती है, जबकि शवदाह का कार्य थोड़ी-सी भूमि पर ही हो जाता है, और उस एक ही स्थान पर यथावसर हजारों-लाखों शवों का दाह हो जाता है।

(ख) गाड़ने से, उस शवों से युक्त भूमि से अनेक रोग वायुमण्डल को दूषित करते हैं। जिससे अनेक रोग फैलते हैं।

(ग) शवों से पटी हुई भूमि के समीप से जो जल बहता है, वह भी विकृत होकर रोग का कारण बनता है।

(घ) कुछ पशु गड़े हुए शव को निकालकर खा जाते हैं। सड़े हुए और रुग्ण शव को खाने से वे पशु स्वयं रोगी होकर मनुष्यों में भी रोग फैलाते हैं।

(ङ) शवों को गाड़ने से समाधि-पूजा, कब्र-पूजा, पीर-पूजा, दरगाह-पूजा आदि पाखण्ड बढ़ते हैं।

(च) इन समाधि-स्थलों, दरगाहों और कब्रों से मिन्नतें मानने का अन्धविश्वास भी बढ़ता है।

(छ) इन समाधियों तथा मज़ारों की पूजा के नाम से और उन पर चढ़ाये गए चढ़ावे से जीवनयापन करने वालों को अन्य उपयोगी रचनात्मक जीवनयापन-साधनों से वंचित रहकर पाप का भागी बनना पड़ता है।

अतः भूमि के दुरुपयोग की दृष्टि से, स्वास्थ्य-रक्षा के विचार से और पाखण्डों और अन्धविश्वासों के निवारण के कारण से भी शवों को गाड़ना बुरा है और उनका दाह करना ही उचित है।

३. प्रश्न—क्या यूरोप अमेरिका आदि के विकसित देशों

में भी कहीं शवों का दाहकर्म किया जाता है ?

उत्तर—हाँ-हाँ, भारतीय संस्कृति से प्रभावित यूनान और रोम में पहले समझदार लोग मृतक का दाहसंस्कार ही करते थे। कालान्तर में ईसाई मत के प्रभाव से उसमें रुकावट आ गई थी। पर लगभग सवा सौ वर्षों से पुनरपि पाश्चात्त्य देशों में मृतक-दाहकर्म प्रचलित होने लगा है। सन् १८७४ में Cremation Society of England ने अपने घोषणापत्र में कहा—"The promoters disapprove of the present system of buring the dead and wish to substitute some method which would rapidly resolve the body into its component elements by a process which could not offend the living and would render the remains perfectly innocuous."

इसके बाद शनैः-शनैः इंग्लैंड में शवदाह आरम्भ हो गया। सन् १९०२ में तो बाकायदा वहाँ की पार्लियामेंट में Cremation act (शवदाह-विधेयक) पास हो गया। इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध तत्त्ववेत्ता Herbert Spencer की इच्छानुसार उनके शव का भी दाहसंस्कार किया गया। अब तो इंग्लैण्ड में प्रतिवर्ष तीन लाख से भी अधिक मृतकों का शवदाह होता है। डेनमार्क, नार्वे, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड आदि में भी शवदाह की विधि का प्रचार बढ़ता जा रहा है। अमेरिका में भी शवदाह-विधि के प्रति लोगों की रुचि बढ़ रही है।

४. प्रश्न—मृत्यु के बाद शरीर का दाह-कर्म (अन्त्येष्टि) करने में वेद का क्या प्रमाण है) ?

उत्तर—यजुर्वेद (४०.१५) में 'अथेदं भस्मान्तꣳ शरीरम्' लिखा है, अर्थात् शरीर अन्त में भस्मरूप में प्ररिणत

होना चाहिए। और भस्मरूप परिणाम दाहकर्म (अन्त्येष्टि) द्वारा ही सम्भव है।

५. प्रश्न—मृतक-शरीर की अन्त्येष्टि करने या न करने पर उस मृतक की आत्मा को पुण्य या पाप लगता है अथवा अन्यों को लगता है?

उत्तर—प्रत्येक आयुष्यप्राप्त गृहस्थ को अपने अन्त्य-संस्कार-हेतु निर्देश—संकेत अपने पुत्र आदि को पूर्वतः कर देना चाहिये और तदर्थ धनादि की व्यवस्था भी कर देनी चाहिये। जो गृहस्थ दुर्व्यसनादि में ग्रस्त होकर अथवा निरुद्यमी होकर अपनी अन्त्येष्टि के लिये आवश्यक धन अथवा द्रव्य अपने पीछे नहीं छोड़ता, वह पाप का भागी होता है। क्योंकि, अन्त्येष्टि न होने की स्थिति में उस शरीर से लोकहानि होने का मूल निमित्त वही ठहरता है। यदि गृहस्थ ने पर्याप्त धन-द्रव्यादि अपने पीछे छोड़े हैं, अथवा पुत्रादि का यथावत् पालन किया है, तो उस अवस्था में उसकी अन्त्येष्टि न होने पर वह मृतक आत्मा पाप-भागी नहीं होता, अपितु उसकी अन्त्येष्टि न करने वाले पुत्र आदि पारिवारिक जन अथवा उत्तराधिकारी-जन पाप के भागी बनते हैं। किन्तु ब्रह्मचारी, संन्यासी आदि जन तो वस्तुतः संग्रही नहीं हैं, उनकी अन्त्येष्टि न होने पर उन्हें पाप नहीं होता। ऐसे विरक्त निस्संग्रही जनों तथा सर्वथा अनाथ, निस्सहाय लोगों की अन्त्येष्टि, समीपस्थ जनों को मिलकर कर देनी चाहिये, अन्यथा वे दोष-भागी होते हैं। दुर्घटना आदि में मृत, किन्तु न पहचाने गये व्यक्तियों की अन्त्येष्टि करने का दायित्व

मुख्यतः राज्यशासन पर है अथवा सम्बद्ध कारखानों या विभागों पर है। ऐसा न करने पर वे पाप-भागी होंगे।

६. प्रश्न—क्या मृत्युसमय में तथा मृत्यूपरान्त गीतापाठ आदि करना चाहिये?

उत्तर—मृत्युसमय का सही पूर्वाभास हो जाय और मरणासन्न व्यक्ति की श्रवण-शक्ति काम कर रही हो, तो शरीर की अनित्यता, आत्मा की नित्यता और ईश्वरीय नियमों की अटलता-विषयक वेदमन्त्रों, श्लोकों और भजनों का पाठ करना लाभप्रद है। इससे म्रियमाण व्यक्ति के मानस पर उत्तम संस्कार पड़ते हैं और उसे, शरीरत्याग करते समय भौतिक मोह कम सताता है। किन्तु प्राण निकल जाने के बाद मृतक शरीर के पास पाठ करने का कोई औचित्य नहीं है। हाँ, पृथक् कमरे या बरामदे आदि में बैठकर शवयात्रा की तैयारी तक पाठ कर सकते हैं। यह, शोकातुर पारिवारिक जनों के शोकनिवारण में थोड़ा सहायक हो सकता है।

७. प्रश्न—मृत्यु होने के पश्चात् अन्त्येष्टि संस्कार करने में एक प्रहर (३ घंटे) का विलम्ब क्यों किया जाता है?

उत्तर—कई बार भूल से तीव्र मूर्छा (गहरी बेहोशी) को भी मृत्यु समझ लिया जाता है। अतः एक प्रहर का अन्तराल रखने से, उस बेहोशी के दूर होने की स्थिति में एक भारी दुर्घटना से बचा जा सकता है। इस बीच अनुभवी व्यक्तियों अथवा उत्तम चिकित्सक की सलाह भी ली जा सकती है। कभी-कभी प्राणों के मस्तिष्क में चढ़ जाने से भी

नाड़ी तथा हृदयगति बन्द हो जाती है और उस व्यक्ति को मृत समझ लिया जाता है। अत: इस विषय में जल्दबाजी से बचने के लिये इस प्रकार विलम्ब करना और उस बीच परीक्षा कर लेना अच्छा है।

८. प्रश्न—मृत्युसमय समीप प्रतीत होने पर क्या उस व्यक्ति को नीचे भूमि पर ले लेना चाहिये ?

उत्तर—खाट, पलँग आदि की पीछे शुद्धि करना कठिन हो, तो व्यक्ति को समभूमि पर चटाई या दरी आदि पर लिटा देना उचित है। किन्तु यदि भूमि पर कीट-जन्तु आदि का भय हो, तो लकड़ी आदि के तख्त पर दरी आदि बिछाकर लिटाना अधिक उचित है।

९. प्रश्न—क्या नीचे लेने की अवस्था में पहले भूमि को गोमय से लीपना और प्राणान्त होने पर उस मृतकशरीर के पास घृत का दीपक जलाना चाहिये ?

उत्तर—यदि आँगन (या फर्श) कच्चा हो तो गोमय से लीपना अच्छा है। इससे कीट-जन्तुओं का प्रवेश नहीं होता। यदि फर्श पक्का हो तो आवश्यकता नहीं। मृतक-शरीर के चारों ओर सूखी पिसी हुई हल्दी की मोटी रेखा भी लगा देनी चाहिये। रात्रि में यदि प्रकाश हो तो दीपक की उतनी आवश्यकता नहीं है। हाँ, घृतधूम की गन्ध से मक्खी-मच्छर आदि कीट दूर रहते हैं, इस दृष्टि से मृतक शरीर के पास घृतदीपक प्रदीप्त रखा जाय तो अच्छा है। इससे किंचित् दुर्गन्ध का प्रतीकार भी होता है।

१०. प्रश्न—क्या मृतक-शरीर पर फूलमालाएँ या फूल चढ़ाना और हाथ जोड़ना उचित है ?

उत्तर—यदि फूलमालाएँ आदि, जैसे चेतन को पहनाई जाती हैं, उस भावना से मृतक-शरीर पर चढ़ाई जाएँ तो अनुचित है, क्योंकि यह जड़-(निर्जीव) पूजा है, अतएव व्यर्थ है। किन्तु, मृतक-शरीर को शवमञ्चिका (अर्थी) पर व्यवस्थित करने के बाद उसको सुगन्धित पुष्पमालाओं से वेष्टित करना उचित है। यह जड़पूजा नहीं है। निरन्तर विकारभाव को प्राप्त होने वाले मृतक-शरीर से सम्भाव्य दुर्गन्ध आदि का थोड़ा-सा निवारण या प्रतीकार उन सुगन्धित पुष्पादि से हो जाता है। इसी भावना से पुष्पमालादि रखना उपादेय है। मृतक-शरीर को हाथ जोड़ना निरर्थक है, क्योंकि निर्जीव शरीर को किसी क्रिया का बोध नहीं होता।

११. प्रश्न—क्या मृतक-शरीर को स्नान कराने से पूर्व उसके शिर, दाढ़ी, मूँछ आदि के केशों का तथा नखों का कर्त्तन करना आवश्यक है ?

उत्तर—स्नान कराना आवश्यक है। केश, नख आदि का कर्त्तन यदि चाहें तो करें। संस्कारविधि के संस्कृतभाग में अन्य आचार्यों के मत के रूप में उसे उद्धृत किया गया है। ग्रन्थकार ने अपने विवरण (हिन्दी भाग) में उसे स्थान नहीं दिया है। स्नान भी, शवमञ्चिका वहन करने वालों को तथा वेदी में स्थापित करने वालों को शरीरमल के सम्पर्क से सम्भाव्य दोषों से बचाने के उद्देश्य से कराया जाता है। किन्तु

सांक्रान्तिक प्लेग आदि रोगों से मृत व्यक्ति के शरीर को घर पर स्नान कराने से, रोग फैलने का भय है, अतः उसे स्नान न कराया जाय। उसकी शवमञ्चिका को भी यदि कन्धों की अपेक्षा किसी वाहन पर रखकर ले जायँ, तो वह अधिक निरापद् होगा।

१२. प्रश्न—क्या मृतक-शरीर को दाहकर्म के लिये श्मशान-स्थली में ले-जाने के पश्चात् जिस कमरे में मृत्यु हुई थी उस कमरे को दश दिन तक उसी स्थिति में बन्द रखना और फिर उस कमरे के फर्श पर किसी (मनुष्य, पशु आदि) प्राणी की तथाकथित उभरी आकृति (रेखाचित्र) से उस मृत व्यक्ति की पुनर्जन्म की योनिविशेष की कल्पना करना यथार्थ है ?

उत्तर—यह सब भ्रान्तिपूर्ण है। मृतक-शरीर को अन्त्येष्टि के लिये उठा ले-जाने के पश्चात् उस कमरे को अवश्य अच्छी प्रकार से धो-पोंछकर शुद्ध करना चाहिये और यथासम्भव उसमें कई दिन तक होम भी करना चाहिये, अथवा होम के पश्चात् हवनकुण्ड रखना चाहिये। उस सूने कमरे के फर्श पर किसी आकृति का बनना निरा भ्रम है। भौतिक शरीर का तो श्मशान-भूमि में दाह कर देने के पश्चात् अस्तित्व रहा नहीं। आकृति किसकी बनेगी? यदि कहें, कि वहाँ उस मृतक जीव (आत्मा) की छाया पड़ती है और उसीकी आकृति बनती है तो यह बात भी असत्य है, क्योंकि छाया तो भौतिक (पार्थिव, जलीय) पदार्थ की पड़ा करती है। आत्मा अभौतिक (अमूर्त्त) है, उसकी छाया पड़ना

सर्वथा असम्भव है। यदि कहें कि सूक्ष्म शरीर की छाया और आकृति बनती है, तो यह भी सत्य नहीं, क्योंकि वह सूक्ष्म शरीर भी सूक्ष्म तन्मात्राओं, ज्ञानेन्द्रियों, प्राण, मन+बुद्धि के समूह का नाम है, जो कि सब अस्थूल हैं और चक्षुषा अग्राह्य हैं, अत: उनकी छाया सम्भव नहीं। और सूक्ष्म शरीर तो सब प्राणियों का एक-सा होता है। सबसे प्रमुख बात यह है, कि सूक्ष्म शरीर भी देहत्याग के बाद आत्मा के साथ ही ईश्वर-व्यवस्था से कर्मानुसार अन्यत्र चला जाता है, अथवा आत्मा की मोक्षप्राप्ति की अवस्था में स्व-स्वकारण में लीन हो जाता है, उस कमरे में नहीं रहता। यदि कहें कि मृतक की आत्मा जिस योनि (शरीर) में अब प्रवेश करेगी उसकी छाया+आकृति का पड़ना सम्भव है, तो यह बात भी असत्य है, क्योंकि कर्मानुसार सैंकड़ों-हजारों कोसों पर स्थित उस योनि (शरीर) की उस कमरे में छाया पड़ना असम्भव है और आत्मा द्वारा प्रवेश्य उस योनि (=शरीर) के शुक्रभाग-रूपी अत्यन्त अल्पांश और चक्षुषा अपरिचेय आरम्भिक शरीर की उस कमरे में छाया पड़ना या आकृति बनना सर्वथा असम्भव है।

१३. प्रश्न—क्या व्यक्ति की मरणासन्नता के समय तथा मरणोपरान्त शवयात्रा-प्रस्थान से पूर्व तथाकथित वैतरणी नदी पार करने और नरकादि की पीड़ा से बचाने आदि के लिये किसी पुरोहित या ब्राह्मण आदि को गोदान, शय्यादान, आमान्नदान, छत्र-जूता-दान, जलकुम्भदान आदि करना चाहिये ?

उत्तर—इस प्रकार के ये सब दान व्यर्थ हैं और भुक्खड़ लोगों के द्वारा धनहरण करने के लिये कपोलकल्पना से बनाये हुए आडम्बर हैं। गरुड़पुराणदि में वर्णित वैतरणी नदी और नरकादि अवास्तविक हैं, उनकी कोई सत्ता नहीं है। इस संसार-सागर को वैतरणी मानें, तो उससे पार उतरना अर्थात् मुक्त होना तो मृत व्यक्ति के द्वारा किये गये कर्मों पर निर्भर है। नरक नाम दुःख-विशेष और दुःखदायी पदार्थों की प्राप्ति का है जो सर्वत्र है, अर्थात् इस लोक में भी सब स्थानों में सम्भव है। मुक्ति, बन्ध, स्वर्ग (सुख) और नरक (दुःख) ये सब आत्मा को कर्मों के अनुसार मिलते हैं। मरणासन्नता के समय अथवा मरणोपरान्त दान देने से उस मृत आत्मा के किये गये कर्मों में कोई घटत-बढ़त नहीं होती, अतएव स्वर्ग (सुख) और नरक (दुःख) में कोई अल्पता-अधिकता सम्भव नहीं। हाँ, उस मृत व्यक्ति की सम्पत्ति के सदुपयोग की दृष्टि से अथवा उसके नाम या कर्मों के चिरस्थायित्व के लिये पारिवारिक-जनों द्वारा लोकोपकारी प्रवृत्तियों या सत्पात्रों में दान करना अवश्य उचित है। पर उसका यह समय उचित नहीं। दान करने का उचित अवसर अस्थिचयन के पश्चात् शोक-समाप्ति के अनन्तर है।

१४. प्रश्न—क्या श्मशान-स्थली की ओर जाते समय शवमञ्चिका (अर्थी) को आधे मार्ग पर नीचे रखकर उसके पिण्ड (आगे का पीछे या पीछे का आगे) बदलने चाहियें ?

उत्तर—मृतक शरीर के साथ पिण्ड (आटे की

लोइयाँ) रखना ही व्यर्थ है। उस पिण्ड से मृतक-शरीर या उसकी आत्मा को किसी प्रकार का कोई लाभ होना सम्भव नहीं है। प्रत्युत खाद्य वस्तु को व्यर्थ दूषित और विकृत करना है। अतः पिण्डों के रखने या बदलने की बात सर्वथा अग्राह्य है।

१५. प्रश्न—क्या श्मशान-स्थली की ओर जाते समय शवमञ्चिका (अर्थी) के ऊपर खीलों (चावल या ज्वार आदि की फूलियों) की वर्षा करते जाना उचित है?

उत्तर—नहीं। इससे भी कोई लाभ नहीं है। मार्ग में गिरी हुई खीलें पाँवों-तले रौंदी जाती हैं और मिट्टी में मिल जाती हैं। यह अन्न का दुरुपयोग है। हाँ, श्मशानस्थली या शवयात्रा के मार्ग की सूचना-हेतु रूई के खण्ड या अन्य कोई ऐसी वस्तु थोड़ी मात्रा में डाली जा सकती है।

१६. प्रश्न—क्या शवयात्रा के समय 'राम नाम सत्य है' आदि वाक्य या वेदमंत्र अवश्य बोलने चाहियें?

उत्तर—शवयात्रा जिस मार्ग से श्मशानस्थली की ओर जायेगी, उस मार्ग में चलने वाले अन्य लोग सुगमता से शवयात्रा के लिए उचित मार्ग दे सकें—इस हेतु उन्हें सूचित करने और ऐसे अवसर पर आत्मा की नित्यता, शरीर की क्षणभङ्गुरता और ईश्वर-नियमों की अनिवार्यता की ओर ध्यान देने-दिलाने के लिए और एकमात्र शरण ईश्वर की ओर स्वजीवन में अवश्य प्रवृत्त होने की प्रेरणा के लिये निम्नलिखित वाक्यों का उच्चारण किया जा सकता है—

आत्मा ही—नित्य है। यह देह—अनित्य है
ओ३म् नाम—सत्य है। वह परम—नित्य है।
जिसे ओ३म् से—प्रीति है। उसकी ही—मुक्ति है।
वायुरनिलम्—अमृतम्। अथेदम्—भस्मान्तं शरीरम्।
अनित्यानि—शरीराणि। विभवो—नैव शाश्वतः।
क्रतो! ओ३म् स्मर—क्लिबे स्मर। क्रतो! ओ३म् स्मर—कृतं स्मर।
जातस्य हि—ध्रुवो मृत्युः। ध्रुवं जन्म—मृतस्य च॥ इत्यादि

१७. प्रश्न—श्मशानयात्रा के समय शवमञ्चिका (अर्थी) का कौन-सा भाग आगे की ओर रखना चाहिये—शिर वाला अथवा पगवाला? और क्यों?

उत्तर—शिर वाला भाग आगे की ओर रखना चाहिये। क्योंकि शिर वाले अर्धभाग में ही अवस्थित, शरीर का धड़वाला भारी भाग शवमञ्चिका पर जिधर होगा, उधर के भाग को अधिक सावधानी से उठाये रखना आवश्यक है। शवमञ्चिका के अग्रभाग को उठाकर चलने वाले, आगे होने के कारण स्वतः ही सावधानी से चलेंगे।

१८. प्रश्न—मृतक-शरीर को वेदी में काष्ठों पर रखते समय उसके शिर वाले भाग को पग वाले भाग की अपेक्षा थोड़ा ऊँचा क्यों रखना चाहिये?

उत्तर—दाहकर्म के समय जब अग्नि कमर से नीचे के भाग में स्थित जंघाओं तथा पिण्डलियों में प्रवेश करती है, तो शरीर के ये अवयव पीछे की ओर मुड़ने लगते हैं, उससे शिरवाले भाग के उत्तर की ओर (वेदी से बाहर की ओर

भी) सटकने (सरकने) की और शिर के काष्ठों से नीचे लटक जाने से सम्भावना रहती है, इसलिए शिरवाले भाग को कुछ ऊँचाई पर रखना चाहिए और कुछ भारी काष्ठ भी इसीलिये शिर तथा छाती पर धरने चाहियें, जिससे वह भाग सरके नहीं। ऐसा करने से दाह भी उत्तम होता है।

१९. प्रश्न—दाहकर्म के समय घी तथा सुगन्धित द्रव्यों की आहुति क्यों देनी चाहिये? शरीर का दाह तो सामान्य लकड़ियों से भी सम्पन्न हो सकता है।

उत्तर—मृतक-शरीर का दाह करते समय पुष्कल घृत तथा सुगन्धित पदार्थों की आहुति अवश्य देनी चाहिये, क्योंकि मृतक-शरीर के दाह के समय त्वचा, मांस, अस्थि, केश आदि के जलने से दुर्गन्ध अवश्य उत्पन्न होती है, जिससे जलवायु आदि के विकृत होने से रोगोत्पत्ति और अशुद्धि की सम्भावना रहती है। उसका निवारण करने के लिये, उसके प्रतीकार के रूप में, साथ ही साथ पर्याप्त मात्रा में घृत तथा सुगन्धित द्रव्यों का भी दहन करना चाहिए अर्थात् आहुति देनी चाहिये। अग्नि द्वारा सूक्ष्म किये गये घृतादि पदार्थों में रोगशमन और विषनाशन की शक्ति अधिक हो जाती है। उनकी आहुति से वातावरण भी शुद्ध हो जाता है।

२०. प्रश्न—अन्त्येष्टि के समय मन्त्र बोलते हुए घृतादि की आहुति देना क्यों आवश्यक है?

उत्तर—अन्त्येष्टि-संस्कार में आहुति देते समय जो मन्त्र बोले जाते हैं, उनमें अन्त्येष्टि-संस्कार की महत्ता,

उत्पन्न शरीर की अवश्यमरणता, आत्मा की नित्यता, कर्मसिद्धान्त की अटलता, शरीरावयवों से उत्तम कर्म ही करने की आवश्यकता, ईश्वर के द्वारा शरीर तथा शरीराङ्गों की विचित्र रचना, पूर्व-मृत सत्पुरुषों के जीवन के उत्तम कर्मों और कीर्ति की स्थिरता, अपने पूज्य विद्वज्जनों के निर्देशन अनुसार चलने से ही जीवन की सार्थकता, मृतक की आत्मा की शान्ति-सद्गति-हेतु शुभकामना-प्रार्थना और जगती के परम यम (नियन्त्रणकर्त्ता) परमेश्वर द्वारा संसार के सर्जन, पालन और संहार की स्मृति आदि चिन्तनीय विषयों का वर्णन है। उनके उच्चारण करने से दाहकर्मियों के चित्तों में शान्ति और शिक्षा की प्राप्ति होती है और द्रव्याहुति के साथ मन्त्रोच्चारण-जनित स्वरतरङ्गों के समन्वय से वातावरण भी प्रभावित होता है। इससे घृतादि-द्रव्य-दहन से सम्भाव्य शुद्धीकरण को और अधिक शक्तिमान् बनाया जा सकता है। कहीं पर कदाचित् मन्त्रपाठ करनेवाला कोई न मिले तो बिना मन्त्रों के भी केवल 'ओ३म् स्वाहा' बोलकर ही घृतादि की आहुति दी जा सकती है।

२१. प्रश्न—यदि असाध्यरोगाक्रान्त मृतक का शव हो अथवा सड़ा-गला हो, तो भी मन्त्र बोलने चाहियें?

उत्तर—ऐसी अवस्था में दूर रहकर मन्त्र बोलें अथवा धीमे स्वर में मन्त्र बोलें और अन्त में स्वाहा का उच्चारण ज़ोर से करें जिससे आहुति देनेवाले को सुविधा हो।

२२. प्रश्न—क्या जिन मन्त्रों का अन्त्येष्टिसंस्कार के

लिये संस्कारविधि में विनियोग किया गया है, उनका अन्य समय में अथवा पारायण-यज्ञ आदि में उच्चारण करना अशुभ है?

उत्तर—नहीं। अन्त्येष्टिसंस्कार-विनियुक्त मन्त्रों को स्वाध्याय-समय अथवा पारायणादि यज्ञों में बोलना अशुभ नहीं है। वेदरक्षार्थ स्वाध्याय आदि में सब प्रकार के मन्त्रों का पाठ अवश्य करना चाहिए। जब गर्भाधान-सम्बन्धी और दाम्पत्य-शरीरसम्पर्क वाले मन्त्रों का स्वाध्यायादि के समय पाठ करने से व्यक्ति दोषयुक्त नहीं माना जाता और युद्ध तथा शत्रुवध-सम्बन्धी मन्त्रों का भी पारायणादि समय में पाठ करने से पाठकर्ता हिंसक नहीं माना जाता और न ही इन मन्त्रों के पाठ-मात्र से उस समय काम या हिंसा की प्रवृत्ति पढ़ने-सुननेवालों की होती है, तो फिर स्वाध्याय और पारायणायज्ञादि में अन्त्येष्टि के मन्त्रों के पाठ-मात्र से कैसे अशुभता या अशुद्धि उत्पन्न हो जाएगी? किं च, वेद-मन्त्रों के विविध अर्थ होते हैं, अतः अन्त्येष्टि में विनियुक्त मन्त्रों को केवल अन्त्येष्टि-कर्मपरक अर्थ वाला ही मानना भी भारी भूल है। इन मन्त्रों के निश्चय ही शरीरविज्ञान, आयुर्विज्ञान, पदार्थविज्ञान और अध्यात्मज्ञान-सम्बन्धी अर्थ भी सुसम्भव हैं। अतः इन मन्त्रों का उन-उन क्रियाओं में भी विनियोग सम्भव है। इसीलिए अन्त्येष्टि में विनियुक्त 'ओ३म् अग्नये स्वाहा, ओं सोमाय स्वाहा; ओ३म् अनुमतये स्वाहा; ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा, ओं द्यावापृथिवीभ्याᳫं स्वाहा, आदि मन्त्रों का अन्त्येष्टि के अतिरिक्त चूडाकर्म, उपनयन, समावर्त्तन, विवाह आदि अनेक संस्कारों में यथाक्रम तथा

बलिवैश्वदेव यज्ञ में भी विनियोग किया गया है। जब इन अन्त्येष्टिप्रयुक्त मन्त्रों का उपनयन और विवाह आदि में बोलना अशुभ नहीं है तो इनका तथा अन्य मन्त्रों का स्वाध्याय या पारायणयज्ञ में पाठ करना क्यों अशुभ है? फलतः सर्व वेदमन्त्रों का स्वाध्याय या पारायणयज्ञ किया जा सकता है।

२३. प्रश्न—आजकल बड़े-बड़े नगरों में विद्युत् शवदाह-गृह बन गये हैं, जहाँ बिजली के द्वारा शवदाह किया जाता है; क्या यह शास्त्रीय है? क्या यह विधि ग्राह्य है? और ऐसा किया जाय तो (विद्युत् द्वारा शवदाह करने की स्थिति में) घृतादि की आहुति देने के विधान का क्या होगा?

उत्तर—घनी बस्ती वाले लम्बे-चौड़े आधुनिक नगरों में लकड़ी आदि की समयापेक्षित व्यवस्था न होने के कारण यदि विद्युत् द्वारा शवदाह की व्यवस्था की गई है, तो वह अग्राह्य नहीं है। विद्युत्-शवदाहगृह में अन्त्येष्टि करने में शास्त्र आड़े नहीं आता। बड़े नगरों में अथवा जहाँ ऐसी व्यवस्था हो, वहाँ इस विधि से अन्त्येष्टि कर लेनी चाहिए। रही बात घृतादि की आहुति देने की, सो प्रमुख बात तो शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्ग के दहन के साथ-साथ घृत व सुगन्धित द्रव्य के भी दहन होने की है। लकड़ियों की अग्नि से दाह करते समय उस अग्नि से शरीर के अवयव धीरे-धीरे दग्ध होते हैं अतः घृतादि की आहुति भी धीरे-धीरे लगाई जाती है; किंतु विद्युत् से दाह की प्रक्रिया अतिशीघ्र होती है, अतः उसके

साथ घृतादि भी शीघ्र दग्ध होते जायँ, ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये। एतदर्थ विद्युत्-शवदाह-गृह के उस दाहक-उपकरण में, मृतक-शरीर स्थापित करने से पूर्व चन्दनादि के कुछ छोटे-छोटे काष्ठखण्ड बिछाकर उन पर सुगन्धित-घृतमिश्रित अगर-तगर-सामग्री पर्याप्त मात्रा में बिछा दें, फिर उस पर मृतक-शरीर रखकर उसको पुनरपि घृतमिश्रित सुगन्धद्रव्य से भली प्रकार आच्छादित करके ही विद्युत् से दाहकर्म करवावें, तो आहुति वाला प्रयोजन सिद्ध हो जाता है। अथवा उस शवदाहगृह में जाने से पूर्व ही घृतमिश्रित सुगन्ध-सामग्री से भरी हुई कपड़े की अथवा पोलिथीन की चपटी थैलियाँ मृतक शरीर के नीचे-ऊपर आजू-बाजू जमा दें और एक अतिरिक्त वस्त्र से इन सबको लपेट दें और सूतली से दृढ़ता-पूर्वक व्यवस्थित करके ही विद्युत्-शवदाह-गृह में ले-जाकर उसे दाहक-उपकरण में अन्त्येष्टि हेतु रखवावें। रही आहुतियों के मन्त्रों के उच्चारण की बात, सो जब अन्दर शवदाह हो रहा हो उस समय बाहर रहकर द्रुतगति से उन मन्त्रों का पाठ किया जा सकता है।

२४. प्रश्न—क्या अस्थिचयन से पूर्व वेदीस्थ भस्मसमूह पर दूध या दूधमिश्रित जल का छिड़काव करना चाहिये तथा क्या अस्थिचयन के पश्चात् उन अस्थियों को दूध से धोना चाहिये ?

उत्तर—यहाँ दूध का उपयोग व्यर्थ है। उष्ण भस्मी को शान्त करने हेतु जल का छिड़काव ही पर्याप्त है। अस्थिचयन के बाद उन्हें दूध से धोना भी निरर्थक है। जब भस्मी और

अस्थियों को भूमिसात् करना है, तो उन्हें धोना किसलिये? तदर्थ दूध का प्रयोग करना तो दूध का दुरुपयोग ही है।

२५. प्रश्न—क्या मृतक की अस्थियों को हरिद्वार या पुष्कर आदि तीर्थ-स्थानों पर ले-जाकर उन्हें गङ्गा आदि नदियों अथवा किसी सरोवर के जल में डालना चाहिये?

उत्तर—नहीं। अस्थियों को किसी भी जल में नहीं डालना चाहिये, प्रत्युत उन्हें पूर्वोक्त विधि से भूमिसात् ही करना चाहिये। अन्त्येष्टिसंस्कार के द्वारा शरीरस्थ जल वाष्प बनकर पुनः जल में ही मिल गया, अग्नि-तत्त्व अग्नि में, वायु-तत्त्व वायु में और शेष रहा भस्म अस्थिरूप पार्थिव तत्त्व, उसे भी पार्थिव अंशों (मृत्तिका) में ही विसर्जित करके मिश्रित कर देना चाहिये। अस्थियों को जल में डालने से जल अशुद्ध, विकृत और अनुपयोगी हो जाता है, अतः जल में डालना अनुचित है। जो लोग यह कहते हैं कि 'अस्थियों में फॉस्फोरस होता है, अतः उनसे जल विकृत या अशुद्ध नहीं होता'। वे लोग थोड़ा विचार करें। फॉस्फोरस के अतिरिक्त भी अस्थियों में बहुत-कुछ होता है, जो जल की अशुद्धि का हेतु बनता है। वे लोग, फॉस्फोरस वाली अस्थियों को अपने घर के जल में तो क्या, घर की बगिया के कुण्ड के जल में भी डालना पसन्द नहीं करेंगे। क्यों? इसलिये कि उन्हें ज्ञात है, कि इससे वह जल अशुद्ध तथा दूषित हो जायेगा। तब फिर गङ्गा आदि नदियों अथवा सरोवरों के जल को क्यों मलिन या अशुद्ध करना?

इस विषय में कुछ लोगों को भ्रान्ति है कि 'अस्थियों

को गंगा आदि के पवित्र जल में न डालने से मृतक की आत्मा को शान्ति नहीं मिलती'। यह बात विचार और दृष्टान्त इन दोनों दृष्टियों से सही नहीं है। आत्मा को शान्ति तो उसके कर्मों के अनुसार ही मिलेगी। अस्थियों के कहीं डालने या न डालने से आत्मशान्ति का कोई लेना-देना नहीं है। जीवितावस्था में भी शरीर को गङ्गा आदि के किसी भी जल में स्नानादि कराने से आत्मा शुद्ध नहीं होता, जैसा कि महाभारत में भीष्मवचन है—'न वारिणा शुध्यति चान्तरात्मा'। अज्ञात स्थान-गत आत्मा के उस अस्थि-अवशेष के जल-विसर्जन से शुद्ध होने की तो सर्वथा ही सम्भावना नहीं है। अतः जल में अस्थिभस्मी के प्रवाहित न करने से आत्मा की अशान्ति, अशुद्धि या भटकने की बात सर्वथा कल्पित है।

प्रसिद्ध वैदिकधर्मोद्धारक स्वामी दयानन्द जी सरस्वती के अस्थि-अवशेषों को अजमेर-स्थित शाहपुरा के बाग की भूमि में मृत्तिकासात् किया गया था। अलवर में श्रीमती शान्ता जी आर्या, आचार्या कमला जी शर्मा की माताजी तथा स्वामी शमानन्द जी के अस्थि-अवशेषों को भी एकान्त में पड़त भूमि में विसर्जित किया गया था। प्रसिद्ध आर्षविद्यानुरागी 'सत्यार्थप्रकाश' के अद्वितीय 'प्रकाशक' दिल्ली-वासी श्री सेठ दीपचन्द जी आर्य के अस्थिखण्डों को भी शाहबेरी ग्राम के निकट की भूमि में पार्थिव अंशों में विलीन किया गया था। इन प्रसंगों में इतने वर्ष बीतने पर भी कहीं कोई आत्मा के भटकने की अथवा अन्य कोई अप्रिय घटना नहीं हुई। ऐसे शतशः उदाहरण हैं।

अतः सिद्धान्तानुसार अस्थि-भस्मी को भूमिसात् ही

करना चाहिये, किसी भी जल में नहीं डालना चाहिये। अपने सत्य सिद्धान्तों का दृढ़तापूर्वक पालन करने से ही आगे स्वच्छ तथा स्वस्थ परम्परा बनती है और लोग भी तभी उस सुन्दर तथा उचित परम्परा का अनुसरण करते हैं।

२६. प्रश्न—मृत्युवाले घर में अन्त्येष्टि (दाहसंस्कार) के पश्चात् कई दिन तक होम (विशेष होम) करना क्यों आवश्यक है ?

उत्तर—मृतक-शरीर के पर्याप्त समयपर्यन्त घर में अवस्थित रहने के कारण घर का वातावरण अशुद्ध तथा दूषित हो जाता है तथा उस प्रकोष्ठ के पदार्थ भी दूषित परमाणुओं से सम्पृक्त हो जाते हैं। घृत तथा सुगन्धित पदार्थों के होम से वातावरण शुद्ध तथा सुगन्धित हो जाता है और पदार्थों पर से दूषित परमाणुओं का प्रभाव हट जाता है। घृत का होम विषनाशक भी है। अतः विषजनक अथवा विषमय रोगाणु भी नष्ट हो जाते हैं। रोगप्रसारक जीवाणु भी होम के धूम से दूर भग जाते हैं।

२७. प्रश्न—कई लोगों का कहना है कि मृतक के घर में दस दिन तक का सूतक होता है, अतः उस अशुद्धिमय घर में होम नहीं करना चाहिये। क्या यह सही है ?

उत्तर—नहीं, यह विचार ग्राह्य नहीं है। अन्त्येष्टि (दाहसंस्कार) के पश्चात् उस कमरे के तथा सम्पूर्ण घर के फर्श को जब अच्छी प्रकार से धो-पोंछकर शुद्ध कर दिया गया और यज्ञपात्र आदि भी मांजकर शुद्ध कर लिये हैं तथा

यज्ञकर्त्ता भी नहा-धोकर शुद्ध हो चुके हैं, तब अशुद्धि कहाँ रह गई? रही उस घर के वातावरणादि की अशुद्धि की बात, सो उस अशुद्धि के निवारण के लिए ही तो वह होम किया जा रहा है। यदि वह होम न किया जाय, तो दस दिन तो क्या सौ दिन तक भी उस घर का वातावरण अशुद्ध रहेगा। उस अशुद्धि के डर से होम न करना तो ऐसा ही है, जैसे वस्त्र पर लगे मैल के डर से उस वस्त्र पर साबुन न लगाना। साबुन तो उस मैल को दूर करने के लिए ही लगाया जाता है। होम से ही सूतकता नष्ट होती है और शुचिता का प्रवेश होता है।

कहीं भी होम करने में अशुद्धि की बात तभी बाधक होती है, जब या तो होम का स्थान (फर्श आदि) गन्दा हो, आसपास गन्दगी हो, पात्र-घृत-सामग्री आदि गन्दे हों अथवा होम करनेवाले अशुद्ध (मलिन) हों। जब ये सब शुद्ध हों तो होम करने में कोई बाधा नहीं है।

२८. प्रश्न—यदि भारी दुर्घटना में किसी की मृत्यु घर से बाहर दूरस्थ देश में हो जाय और वहीं उसका सामान्य दाहसंस्कार करना पड़ गया हो, अथवा विमान आदि की दुर्घटना में मृत व्यक्ति का शरीर ही अन्त्येष्टि के लिये उपलब्ध नहीं हो सका हो, किन्तु मृत्यु का निश्चय हो गया हो, तो उस अवस्था में क्या उस मृत व्यक्ति के घर में विशेष होम, शुद्धि हेतु करना चाहिये?

उत्तर—हाँ, करना चाहिये। यद्यपि व्यक्ति की मृत्यु उसके घर के बाहर ही हुई है और मृतक-शरीर घर में लाया भी नहीं गया है, अतः उसके घर का वातावरणादि तो अशुद्ध

या दूषित नहीं हुए हैं, तथापि कहीं भी मृतक-शरीर का पात तो हुआ है अथवा कहीं उसका दाह भी हुआ है। इन दोनों कारणों से जगत् का वातावरण तो दूषित हुआ ही है। अतः उसके प्रतीकार के लिये कई दिन तक उसके पारिवारिकजनों द्वारा विशेष होम किया ही जाना चाहिये। हाँ, बाहर देश में ही उसकी विधिपूर्वक अन्त्येष्टि की गई हो तो फिर मृत व्यक्ति के घर में विशेष होम की अनिवार्यता नहीं है।

२९. प्रश्न—क्या मृत्यु के पश्चात् दस या बारह दिन तक शोक 'पालना' चाहिये? और क्या घर के किसी व्यक्ति का घर में किसी निर्धारित स्थान पर बैठना और शोक-समवेदना प्रकट करते हुए आने वाले लोगों के लिये निरन्तर उपस्थित रहना आवश्यक है?

उत्तर—मृत्यु वाले घर में शोकाकुल पारिवारिक लोग स्वतः ही श्रृंगार और तड़क-भड़क से दूर रहते हैं और रहना चाहिये तथा उत्सव अथवा विशेष समारोहों को यथासम्भव कुछ दिन के लिये स्थगित करना अच्छा है, क्योंकि शोकाकुल चित्त से मनाये गये उत्सव आदि विशेष फलदायक नहीं होते।

शोक-समवेदना—सम्मिलन हेतु घर के किसी व्यक्ति के एक स्थान में बैठे रहने में कोई दोष नहीं है। क्योंकि, यद्यपि अस्थिचयन और उसकी व्यवस्था के बाद मृत व्यक्ति के सम्बन्ध में कोई कर्त्तव्य कर्म शेष नहीं रहता, तथापि शोक-समवेदनार्थ आनेवालों की समवेदना स्वीकार करना एक सामाजिक कर्त्तव्य है। दस या बारह दिन तक की इस

प्रथा के चलने का कारण सम्भवतः यह रहा होगा, कि पहले संवाद-संचार तथा यातायात के साधन मन्द तथा अल्प होने के कारण लोगों को मृत्यु की सूचना देर से मिलती थी, और फिर मृत व्यक्ति के घर तक पहुँचने में भी पर्याप्त समय लग जाता था। अतएव यह विचार करके कि इतने समय में तो (१०-१२ दिनों में तो) आगन्तुक जन आ ही सकेंगे, समय की एक अवधि निश्चित कर दी। इसे सामूहिक विचार-विमर्श के द्वारा कम-अधिक भी किया जा सकता है।

३०. प्रश्न—क्या मृत्यु के पश्चात् मृतक के घर में गरुड़पुराण की कथा करवानी चाहिये ?

उत्तर—नहीं। क्योंकि गरुड़पुराण की बातें, मृत्यु के बाद के आत्म-जीवन के विषय में भ्रान्तिपूर्ण हैं और उसमें वर्णित अनेक भौगोलिक और आध्यात्मिक आदि तथ्य भी असत्य हैं। गरुड़ पुराण के उत्तरार्ध (प्रेतकल्प) में यमलोक, प्रेत, पिशाच, यमपुर आदि के विषय में असम्भव एवं असत्य वर्णन हैं। अतः ऐसे ग्रन्थों की कथा करने-सुनने से कोई लाभ तो है नहीं उलटे भ्रान्तिज्ञान-रूपी हानि अवश्य होती है। अतः गरुड़-पुराण की कथा न करवाना ही अच्छा है। हाँ, पारिवारिकजनों के शोक-शमनार्थ और धैर्यसन्धारणार्थ आत्मविद्या, परमात्मज्ञान, कालगति और सृष्टिचक्र-विषयक वेद के प्रकरणों की अथवा उपनिषदों की व्याख्या-प्रवचन-कथा करवाना श्रेयस्कर है। एतदर्थ—यजुर्वेद का ४०वाँ, ३२वाँ, ३६वाँ अध्याय, अथर्ववेद का स्कम्भसूक्त, केनसूक्त आदि, ऋग्वेद का अस्यवामीय सूक्त, नासदीय सूक्त, पवित्रसूक्त,

हिरण्यगर्भसूक्त, पुरुषसूक्त आदि और कठोपनिषद् तथा केनोपनिषद् आदि का चयन किया जा सकता है।

३१. प्रश्न—क्या अन्त्येष्टि-संस्कार करवानेवाले पुरोहित को इस कर्म की दक्षिणा यजमान से माँगनी अथवा उसके द्वारा स्वतः दिये जाने पर स्वीकार कर लेनी चाहिये?

उत्तर—अन्त्येष्टि संस्कार तो क्या, किसी भी संस्कार की दक्षिणा माँगकर तो कभी नहीं लेनी चाहिये। अन्त्येष्टि संस्कार की दक्षिणा माँगना तो अत्यन्त अशिष्टता है। यदि यजमान स्वतः देता हो, तो भी अन्त्येष्टि की दक्षिणा का उस समय स्वीकार करना शोभनीय प्रतीत नहीं होता। किन्तु, दक्षिणा का सर्वथा देना-लेना न होना भी अव्यवहार्य है। यजमान को चाहिये कि वह अन्त्येष्टि संस्कार की दक्षिणा स्वीकार करने के लिये उस समय पुरोहित (संस्कारकारयिता) से आग्रह न करे, पर अन्य नामकरण, उपनयन, विवाह आदि संस्कारों के समय अथवा जन्मोत्सव या वर्षगाँठ जैसे हर्ष-प्रसङ्गों में पुरोहित को ससम्मान बुलाकर उन्हें पुष्कल दक्षिणादि से सत्कृत करें अथवा उनके स्थान पर ही पहुँचा दें। इस संस्कार से दक्षिणा वाली बात को सर्वथा उड़ा देने से इस संस्कार को करवाने के प्रति किसी की वास्तविक रुचि नहीं रह पायेगी। भारत-विभाजन के समय दिल्ली के 'दीवान हॉल' में अनेक पण्डित-पुरोहित महानुभाव निवास करने लगे थे। वहाँ जब नामकरण, विवाह आदि संस्कार हेतु कोई यजमान आता तब तो प्रत्येक पण्डित स्वयं पहले जाने हेतु तैयार हो जाता था, किन्तु कोई अन्त्येष्टि संस्कार करवाने हेतु

आता, तो उसे सब एक-दूसरे के पास भेज देते थे। अतः इसकी दक्षिणा का सर्वथा लोप नहीं करना चाहिए। क्योंकि यह संस्कार पर्याप्त समय-साध्य और शक्तिसाध्य है, अतः इसकी दक्षिणा की कोई शोभनीय व्यवस्था होनी ही चाहिये। हाँ, जो पुरोहित महानुभाव योगक्षेम-सम्पन्न हैं अथवा इस प्रकार की दक्षिणा के बिना भी निर्वाह चला सकते हैं, वे भले ही किसी भी रूप में इसकी दक्षिणा न लें, किन्तु जो विपन्न हैं, वे यदि इसकी दक्षिणा किसी हर्षप्रसङ्ग में अथवा शोकोत्तर-काल में ले लें, तो अनर्थ नहीं है।

३२. प्रश्न—अन्त्येष्टि-संस्कार करवाने के पश्चात् अन्त्येष्टि-संस्कार की पुस्तक को घर में अन्य पुस्तकों के साथ रखना चाहिये कि नहीं ?

उत्तर—नहीं। जिन्हें अन्त्येष्टि के मन्त्र कंठाग्र हैं, वे तो बिना पुस्तक के ही संस्कार करवा देंगे। किन्तु वहाँ जो पुस्तक ले जाई जावे, उसे कुछ समय तक धूप में रखकर फिर किसी पोलीथीन आदि की थैली में रखकर अपने घर के बाहर के किसी स्टोर आदि में कील पर टाँग देना चाहिये। यदि सम्भव हो तो श्मशान-भूमि में अन्त्येष्टि-संस्कार की दो-चार पुस्तिकाएँ रखवा देनी चाहियें। जब अशुद्धि के कारण शवदाह के पश्चात् दाहकर्त्ता स्नान व वस्त्र-प्रक्षालन करते हैं, तो कथंचित् अशुद्ध पुस्तक को अन्य पुस्तकों में रखना ठीक नहीं है। इसीलिये इस पुस्तिका को पृथक् से छापा गया है।

□□